इस्लाम और इंसानी हुक़ूक़

क़ाएदे मिल्लत मौलाना सै० कल्बे जवाद नक़वी, जनरल सेक्रेट्री मजलिस उलमा-ए-हिन्द
अनुवादः सैय्यद सुफ़यान अहमद नदवी

(7)

इस्लाम की मुख़ालिफ़त उसकी शुरुआत से लेकर आज तक चल रही है और आगे भी चलती रहेगी। हर ज़माने की शैतानी ताक़तें इस्लाम से टकराती रही हैं और उसको नुक़सान पहुँचाने के लिए हर तरीक़ा आज़माया जा रहा है। इस ज़माने में इस नफ़रत भरी मुहिम में वैसे तो तक़रीबन हर ग़ैर मुस्लिम साझीदार और साथी है, लेकिन आगे-आगे पश्चिमी देश हैं, जिनका सरग़ना और ज़िम्मेदार अमरीका और उसका पिछलग्गू इस्राईल है। ज़ाहिरी तौर पर उनमें से कुछ की ज़बानों पर इस्लाम की तारीफ़ भी है और रमज़ानुल मुबारक के मौक़े पर इफ़्तार का एहतेमाम भी है, लेकिन छुपे तौर पर इस्लाम की बरबादी के लिए यह सब एकजुट और एक अहद से जुड़े हैं और इनके छुपे एजेण्डे की पहली बात इस्लाम को जड़ से उखाड़ फेंकना है। ज़बान व क़लम से बराबर हमले हैं कि इस्लाम में तशद्दुद है, ज़बरदस्ती है, इसके क़ानून में रहमदिली और रूहानियत नही है और इंसान के अधिकारों को बर्बाद करना इस्लाम का तरीक़ा है, जबकि हक़ीक़त में इस्लाम रहमत का दीन है, मेहरबानी नर्मी और मुहब्बत का दीन है। इसकी पहली दलील ख़ुद क़ुरआन मजीद की शुरुआत है। ख़ुदा के कलाम की शुरुआत ही लफ़्ज़ रहमान और रहीम से होती है। क़ुरआन मजीद ने मुसलमानों को हुक्म दिया है, मतलबः- ''आप बुराई को अच्छाई से दूर कीजिए'' (सूरए मोमिनून, आयत-96) यानी बुराई के जवाब में बुराई और ज़ुल्म के जवाब में ज़ुल्म की इजाज़त नहीं है। दूसरी जगह इरशाद है, मतलबः- ''ऐ पैग़म्बर[स०] ये अल्लाह की रहमत है कि आप उन लोगों के लिए नम्र दिल हैं।'' (आले इमरान, आयत-159) एक जगह पर मुसलमानों को हुक्म दिया जा रहा है, मतलबः- ''ईमान वालो! तुम सब मुकम्मल तरीक़े से अम्न व सुलह के घेरे में दाख़िल हो जाओ और शैतान के क़दम से क़दम मिलाकर न चलो यक़ीनन वह तुम्हारा खुला हुआ दुश्मन है।'' (सूरए बक़रा, आयत-208) ये आयते करीमा खुले तौर पर एलान कर रही है कि इस्लामी क़ानून की बुनियाद सुल्ह व अम्न है। क़ुरआन मजीद जंग की आग भड़काने वालों को शैतान का मानने वाला बता रहा है। यानी क़ुरआन करीम की नज़र में जंग पसंदी शैतान का तरीक़ा और अम्न और सुलह रहमान का तरीक़ा है। मुहब्बत और रहमत की किताब एलान कर रही है, मतलबः- ''उसकी निशानियों में ये ये भी है कि उसने तुम्हारा जोड़ा तुम्हीं में से पैदा किया ताकि तुम्हें सुकून हासिल हो और फिर तुम्हारे बीच मुहब्बत और रहमत क़रार दी। इसमें समझ रखने वालों के लिए बहुत से निशानियाँ पाई जाती हैं।'' (सूरए रूम, आयत-220) इंसानों के दरमियान मुहब्बत और उलफ़त की ईजाद को अल्लाह तआला ने अपने मोजिज़ों और निशानियों में शुमार किया है। अब पढ़ने वाले ख़ुद फैसला करें कि ऐसे क़ानून में जिसकी बुनियाद रहमत, मुहब्बत हो तशद्दुद और आतंकवाद की जगह कहाँ पैदा होती है?

इमाम जाफ़र सादिक़ से किसी ने पूछा दीन क्या है? आप ने फ़रमायाः ''क्या दीन मुहब्बत के अलावा कुछ और है?'' फिर इमाम ने अपनी बात की दलील में क़ुरआन मजीद की आयत पेश फ़रमाई, मतलबः- ''अगर तुम अल्लाह से मुहब्बत करते हो तो रसूल[स०]

की पैरवी करो अल्लाह भी तुम्हें महबूब रखेगा।" (आले इमरान, आयत-31) यानी अमल करने की वजह, इश्क़ और मुहब्बत ही है। एक दूसरी हदीस में है: "दीन मुहब्बत है और मुहब्बत दीन है" (मीज़ानुल हिक्मा, जि-2 पेज-215) क्या जिस दीन में हर अमल की बुनियाद मुहब्बत को क़रार दिया गया हो? जहाँ दीन पूरे का पूरा मुहब्बत हो, वहाँ बेदर्दी, मार-काट, अत्याचार और आतंकवाद के ज़रिए बेगुनाहों को मार डालने की इजाज़त हो सकती है?

आज का फ़लसफ़ा है कि मुहब्बत और जंग में हर चीज़ जाएज़ है। जंग जीत लो चाहे बहादुरी से या चालाकी और मक्कारी से, लेकिन जब इस्लामी फ़ौज जाने लगती थी तो रसूले इस्लाम[स०] उसे मुख़ातब करके फ़रमाते थे कि देखो जंग करने तो जा रहे हो, मगर हवस और चाहत को अपने दिल में जगह न देना। तुम्हारा हर अमल अल्लाह की मर्ज़ी के मुताबिक़ होना चाहिए और हर अमल में इस्लाम की बड़ाई सामने रहे। फ़रमाते थे: देखो चोरी न करना और बहाने और धोके से काम न लेना। यहाँ पर अपनों की शर्त नहीं लगाई है, यानी अपनों को धोका देना तो बहुत दूर की बात है इस्लाम जंग के मैदान में जान के दुश्मनों को भी धोका देने की इजाज़त नहीं दे रहा है। फ़रमाते थे, दुश्मन की लाशों की बेइज़्ज़ती न करना। अगर दुश्मन से कोई अहद हो जाए तो उसकी इज़्ज़त करना, कमज़ोर और बेसहारा लोगों को, बच्चों और औरतों को दुनिया से अलग-थलग लोगों को हरगिज़ क़त्ल न करना। पेड़ों को न जलाना बहुत ज़रूरी हो तो उनको काटना, दुश्मन के पानी में ज़हर न मिलाना। आपने देखा कि इस्लामी रहमत सिर्फ़ इंसानों से जुड़ी नहीं है, बल्कि इसके घेरे में बेजान चीज़ें भी आती हैं। इसलिए पैग़म्बरे इस्लाम[स०] ने हुक्म दिया कि दुश्मन के इलाक़े में हरे-भरे माहौल को नुक़सान न पहुँचाओ। अगर पेड़ काटना ज़रूरी हो तो सिर्फ़ उतना काटो जितनी ज़रूरत हो, यानी इस्लाम को भड़कती हुई जंग की आग में भी माहौल की हरियाली का ख़याल है। यहूदियों के सबसे मज़बूत क़िले ख़ैबर के घेराव को तीन हफ़्ते गुज़र चुके थे, मगर क़िले पर जीत नहीं मिल पा रही थी, यहूदी बहुत ही सख़्ती से बचाव कर रहे थे। एक चश्मा क़िले के बाहर से अन्दर की तरफ़ जाता था, जिस से यहूदी अपनी प्यास बुझाते थे। किसी ने रसूलुल्लाह[स०] को मश्वरा दिया कि अगर इस चश्मे में ज़हर मिला दिया जाए तो बिना मेहनत के जीत मिल जाएगी। रसूल[स०] ने सख़्ती से इनकार किया कि ये बुज़दिली है, इस तरह से अगर जंग जीती तो इस्लाम की जीत नहीं, बल्कि हार होगी। इसका मतलब ये है कि जंग में हर चीज़ जायज़ है, मगर इस्लाम में जंग नहीं जेहाद है और जेहाद में पहली शर्त तक़्वा है। इसलिए बद्र की जंग के लिए क़ुरआन मजीद ने एलान फ़रमाया, मतलबः- ऐ मुसलमानो अगर तुम ने मैदान में सब्र किया और तक़्वे को चुना तो जीत तुम्हारी होगी। यही तक़्वा है जो जंग के मैदान को इबादतगाह में बदल देता है और जंग जेहाद बन जाती है।

रसूले इस्लाम[स०] अपनी फ़ौज को ख़िताब करके फ़रमाते थे, "अगर किसी मुसलमान ने चाहे वह छोटा हो या बड़ा किसी इस्लाम के दुश्मन को पनाह दे दी तो उस पनाह देने की इज़्ज़त की जाए और उस काफ़िर या मुश्रिक को जंग के मैदान से किसी अम्न की जगह पर ले जाया जाए और उसके सामने बहुत ही मुहब्बत से इस्लाम की अच्छाईयाँ और ख़ूबियाँ पेश की जाएं। अगर वह मुसलमान हो जाए तो उसे मुसलमानों के सारे हुक़ूक़ मिल जाएंगे और वह तुम्हारा भाई है और अगर उसने इस्लाम क़ुबूल नहीं किया या सोचने समझने के लिए और वक़्त माँगा तो उसे बिना किसी नुक़सान के सही और सालिम उसके इलाक़े तक वापस पहुँचा देना और उसे किसी भी तरह की तकलीफ़ पहुँचाने का हक़ किसी मुसलमान को न होगा।' रसूलुल्लाह[स०] के सारे फ़रमान क़ुरआन मजीद के हिसाब से हैं। ज़ाहिर है कि इन सभी कामों के लिए बहुत बड़ा दिल चाहिए। बीच जंग के मैदान में जब सर कट-कट कर उछल रहे हों, ख़ून की बारिश हो रही हो, ऐसे मौक़े पर अपने दुश्मन के साथ रहम और मेहरबानी का सुलूक करने के लिए समन्दर से बड़ा सीना और पहाड़ों से ज़्यादा मज़बूत ईमान की ज़रूरत है, इसीलिए रसूलुल्लाह[स०] ने आख़िर में फ़रमायाः "इन कामों को अन्जाम देने के लिए अल्लाह तआला से मदद माँगते रहो।" (बिहरुल अनवार, जि-42 पेज 246-257)

(बशुक्रिया रोज़नामा राष्ट्रीय सहारा (उर्दू), 25 फ़रवरी 2011[ई०])

(8)

पिछले मज़मून में ये बात इस मक़ाम तक पहुँची थी कि ठीक जंग के मैदान में जब ख़ून की बारिश हो रही हो, घमासान का रन हो, तलवारें चल रही हों, सही और सच्चा मुसलमान वह है, जो इन हालात में भी अपने दुश्मन पर ज़्यादती न करे और उसके साथ रहम से पेश आए। आज की तहज़ीब और तमद्दुन का दावा करने वाली दुनिया में भी जंग के मौक़े पर दुश्मन से रहमत और मुहब्बत का सुलूक नामुमकिन बातों में से है कि जिसका हुक्म इस्लाम ने आज से 14 सौ साल पहले अपने मानने वालों को दिया है। आज भी अमरीका की सरपरस्ती में इस्राईल के बम्बारी करने वाले जहाज़, पनाह लेने वालों, कैम्पों, अस्पतालों, यतीमख़ानों, स्कूलों पर बम्बारी करते नज़र आते हैं। बोसनिया की सबसे बुरी मिसाल हमारे सामने है, जहाँ ऐसे ज़ुल्म हुए कि हैवानियत शर्म खा जाए। काश हमारी ये बातें इस्लाम पर इल्ज़ाम लगाने वालों तक पहुँच सकें। ख़ासकर उन मुसलमान बच्चों और जवानों तक पहुँचें। जिन्हें अमरीका और इस्राईल के ख़रीदे हुए मोलवी आत्मघाती हमलावर बनने पर मजबूर कर देते हैं, जिसकी वजह से अब तक लाखों बेगुनाह मुसलमानों की जानें इराक़, पाकिस्तान, अफ़ग़ानिस्तान वग़ैरा में बर्बाद हो चुकी हैं।

तारीख़ गवाह है कि जब इत्तेहादी फ़ौजियों ने जर्मन की राजधानी बर्लिन पर क़ब्ज़ा किया तो ज़ुल्मो सितम के तूफ़ान उठा दिये, यहाँ तक कि माओं की गोदों से बच्चों को छीनकर हवा में उछालते थे और गोलियों का निशाना बना देते थे, लेकिन जब रसूलुल्लाह[स०] जीत वाली शान से मक्का में दाख़िल हुए तो क्योंकि मक्का वालों ने मुसलमानों को सख़्त तकलीफ़ें दी थीं और कितने मुसलमान इन तकलीफ़ों की वजह से शहीद हो गए थे, इसलिए एक बुज़ुर्ग सहाबी हज़रत साद बिन उबादा[रज़ि०] की ज़बान से निकल गया। ''आज इंतेक़ाम और ख़ून बहाने का दिन है'' जैसे ही रसूल[स०] को ख़बर हुई उनके हाथ से झण्डा ले लिया और एलान करवायाः ''आज मेहरबानी का दिन है'' मक्का के सारे क़ातिलों और तकलीफ़ देने वालों को इकटठा करके एलान कियाः ''जाओ तुम आज़ाद हो''।

इस्लाम में सबसे पहली चीज़ सुल्ह और अम्न है और जंग की हालत बचाव की है। इस्लाम में जेहाद की रूह बचाव करना है न कि हमला, रसूले पाक[स०] की सीरत का सबसे अहम हिस्सा यही है कि कभी हमले में पहल नहीं की। इस्लामी फ़ौज के कमाण्डर से कहते हुए फ़रमाया था कि जब भी दुश्मन का सामना हो तो उनके सामने तीन बातें रखो कि इनमें से कोई एक कुबूल कर लेंः या इस्लाम कुबूल कर लें, या जिज़्या देना मन्जूर कर लें या फिर जंग के मैदान से पलट जाएं। अगर इनमें से कोई एक बात कुबूल हो गई तो अब जंग का कोई सवाल नहीं। हज़रत अली[अ०] ने जमल की जंग में अपने फ़ौजियों से ख़िताब फ़रमाया था, ''तुम्हारी तरफ़ से न कोई तीर चलाया जाएगा, न नेज़े से वार होगा, न तुम अपनी तलवारों को न्यामों से बाहर निकालो, बल्कि हुज्जत को पूरा करो, उनके सामने दलीलें पेश करो।'' जंगे सिफ़्फ़ीन में भी अपने लश्कर के कमाण्डर मालिके अश्तर[अ०] से फ़रमाया थाः जंग तुम्हारी तरफ़ से शुरु नहीं होना है, मगर ये कि सामने वाला जंग की शुरुआत करे। अगर दुश्मन जंग शुरु करे, तब तुम्हें हथियार उठाना है'' यानी जंग की हालत बचाव करने वाली होनी चाहिए। मुसलमानों की सबसे मशहूर तारीख़ ''तारीख़े तबरी'' में हज़रत अली[अ०] के जुमले महफ़ूज़ है कि वह जब भी दुश्मन के सामने होते थे तो अपनी फ़ौज को ख़िताब करके फ़रमाते थेः ''अगर तुम्हारे सामने से तुम्हारा दुश्मन भागे तो कभी भागते हुए को क़त्ल न करना, अगर दुश्मन ज़ख़्मी हो जाए तो उसे क़त्ल न करना। उसे नंगा मत करना (अरब का तरीक़ा ये था कि क़ातिल, मक़तूल की सारी चीज़ों पर क़ब्ज़ा कर लेता था, यहाँ तक कि कपड़े भी उतार लेता था) जब दुश्मनों के घरों तक पहुँचो तो उनके घर वालों की बेइज़्ज़ती न करना, बिना इजाज़त उनके घर में दाख़िल न होना, उनके घरों को न लूटना, किसी औरत को तकलीफ़ न पहुँचाना, अगर वह तुम्हें गालियाँ भी क्यों न दे रही हो, यहाँ तक कि चाहे तुम्हारे कमाण्डरों और सरदारों को बुरा-भला कह रही हों।'' (तारीख़े तबरी, जि-5 पेज-10)

दूसरी जंगे अज़ीम की हौलनाकियों के बाद 12 अगस्त 1949[ई०] में जिनेवा में एक कान्फ्रेंस में तजवीज़ पास हुई, जिसमें जंगी क़ैदियों, जंग में ज़ख़्मी होने वाले

(शेष..... पेज 4 पर)

निर्भर है। अतः हमें अपने को सास्ति बनाने के लिए सत्ता उत्पन्न करने वाले की आवश्यकता है। संसार न था और हुआ। यदि हुआ तो किसी ने उसे जन्म दिया। अब यदि विश्व को जन्म देने वाला भी हमारी ही तरह हुआ तो वह और उसका व्यक्तित्व दोनों भिन्न-भिन्न हुए। इस प्रकार वह भी अपने सास्ति के लिए दूसरे के अधीन तथा आश्रित हुआ। अतः वह भी इस सम्भाव्य जगत का एक अंश हो जाएगा। इस प्रकार यह बात स्पष्ट है कि वह विश्व को जन्म देने वाला नहीं हो सकेगा।

वह समस्त विश्व के चराचर का जन्मदाता है अगर हम उसे अपने ही समान मान लें तो वह भी हमारे ही समान नश्वर होगा अगर जन्म दाता नश्वर हुआ तो उसके द्वारा सृष्टि रचना और पालन का कोई प्रश्न नहीं उठता। अतएव यह मानना पड़ेगा कि वह अविनाशी है, अनादि तथा अतन्त है। दार्शनिक सिद्धान्त के अनुसार विश्व को रूप देने वाले का होना अनिवार्य है। इसके अतिरिक्त समस्त संसार को सम्भाव्य कहते हैं। सम्भाव्य वस्तुएं अपने उत्पन्न होने के लिए एक जन्मदाता के अधीन हैं, और जन्मदाता का होना अनिवार्य है। अतः वह निर्विवाद रूप से अपनी उत्पत्ति के लिए किसी अन्य शक्ति के अधीन नहीं है।

(अस्त्यार्थक एवम् निषेधार्थक)

स्मरण रखना चाहिये कि जितनी बुराईयाँ जितने दोष तथा जितने अवगुण होते हैं वे सब नास्ति से सम्बन्धित हैं। हम में नास्ति सम्भव है, अतः हम ने अवगुणों का होना सम्भव है। 'सत्ता' हमारी अपनी नहीं। यही हम में सबसे बड़ा अभाव है। जिससे अनेक अवगुण उत्तपन्न होते हैं। हमारी सत्ता का स्तर जितना उच्च होता है उतने ही अधि क गुण हममें उत्तनन्न होते हैं। ब्रह्म सम्पूर्ण रूप से सत्ता ही सत्ता है इसलिये वह गुणों से भिन्न नहीं हैं। वह निष्कलंक, निर्दोश एवं सर्वगुण सम्पन्न है।

(जारी)

शेष... इसलाम और इंसानी हुकूक़

फ़ौजियों और जंग में हिस्सा लेने वाले अवाम के हुकूक़ की बात कही गई, जिसमें सख़्ती से ये बात कहीं गई कि किसी जंगी क़ैदी को तकलीफ़ नहीं पहुँचाई जाएगी, किसी ज़ख़्मी को क़त्ल नहीं किया जाएगा और निहत्ते अवाम पर हमला नहीं होगा, लेकिन आप लोगों ने देखा कि जिन बातों तक दुनिया आज पहुँची है, उन हुकूक़ का लेहाज़ इस्लाम ने 14 सौ साल पहले ही रखा है और उन सभी हुकूक़ का बयान आज की दुनिया में सिर्फ़ काग़ज़ पर है, जबकि इस्लामी रहबरों ने चौदह सौ साल पहले इन पर अमल करके दिखाया है। 1949ई० में जिनेवा में लगातार 4 कन्वेन्शन हुए, जिनमें से हर कन्वेन्शन में पिछली ग़लतियों को दूर किया गया और कुछ नई बातों को बढ़ाया गया। इसके बाद भी 2005ई० तक और बातें बढ़ाई गईं जो प्रोटोकोल-प्रथम, द्वितीय और तृतीय के नाम से मशहूर हैं, लेकिन इसके बाद भी आज की तरक़्क़ी की हुई दुनिया उन जंग के आदाब तक नहीं पहुँच सकी जो इस्लाम ने बनाए हैं, न उस रहम और करम का दर्जा हासिल कर सकी कि जिस तक इस्लामी क़ानूनों की पहुँच है, जिसका एक सुबूत क़बील-ए-ख़ुज़ैमा का वाक़िआ है। मक्का की जीत के बाद रसूले अकरमस० ने ख़ालिद बिन वलीद की सरदारी में एक फ़ौज क़बील-ए-ख़ुज़ैमा की तरफ़ भेजी ताकि उन्हें इस्लाम की दावत दें, लेकिन जंग करने की इजाज़त नहीं दी थी। जब ख़ालिद बिन वलीद उनके इलाक़े में पहुँचे तो वह लोग हथियार लेकर सामने आ गए। ख़ालिद ने उन्हें पनाह देने का वादा किया, लेकिन जब उन्होंने अपने हथियार फेंक दिये तो उनका क़त्ले आम कर दिया। जैसे ही रसूले अकरमस० को इसकी ख़बर मिली आपस० ने आसमान की तरफ़ अपने हाथ उठाए और कहाः "ऐ अल्लाह में ख़ालिद के इस काम से बराअत का इज़हार करता हूँ" (अल-कामिल फ़ित्तारीख़, जि-2 पेज-182) इसके बाद हज़रत अलीअ० को कुछ रक़म देकर भेजा कि उनमें जो बचे हुए हैं उन्हें राज़ी करें। हज़रत अलीअ० ने सबके खून का बदला अदा किया। जितना उनका नुक़सान हुआ था वह सब पूरा किया। जिन बर्तनों में जानवर खाते थे यहाँ तक कि अगर कुत्तों के खाने के बर्तन जंग के बीच टूटे थे उनकी क़ीमत भी अदा की और ये सुनकर आज की तरक़्क़ी करने वाला दिमाग़ भी हैरान रह जाएगा चूँकि औरतें और बच्चे डरे हुए थे, इसलिए उन्हें भी मुआवज़ा (Compensation) दिया गया। ये दिमाग़ी तकलीफ़ का बिल्कुल नया ख़याल है जिस पर आज से चौदह सौ साल पहले इस्लाम ने अमल किया है। (बशुक्रिया रोज़नामा राष्ट्रीय सहारा (उर्दू), 11 मार्च 2011ई०)

(जारी)